ISSN: 2349-4654
नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डांस एण्ड म्यूज़िक
वर्ष : 8, सेमिनार विशेषांक, नवंबर 2019

भारतीय संगीत के सन्दर्भ में संग्रहालयों की भूमिका : उपयोगिता एवं मूल्यांकन

डॉ. चित्रा शंकर
ए-74ए विकास विहार, नई दिल्ली-41

Paper recieved on : Sep 09, 2019, Nov 16, 2019, Accepted : May 27, 2020

सार-संक्षेप

भारतीय संगीत पर आधारित यथा संभव सामग्री की उपलब्धता की दृष्टि से संग्रहालयों की भूमिका निर्विवाद है। सौभाग्य से हमारे देश में संगीत आदि महान कलाओं का विकास सदियों से होता हुआ दिखाई देता है। सदियों से हो रहे भारतीय संगीत के विकास के स्थित्यंतरों को समाज द्वारा स्वीकृति प्रदान की तथा उसके द्वारा आवश्यकतानुसार परिवर्तनों को भी। संभवत: संगीत ही एक मात्र कला है, जिसकी कलात्मक अभिव्यक्ति संगीत के अतिरिक्त मूर्तियों, भित्तिशिल्प, चित्रों इत्यादि के माध्यम से हुई है और इन सभी स्त्रोतों का एक बड़ा भाग हमारे संग्रहालयों में सुरक्षित है। संग्रहालय के कार्य का आधार है—संगठन और कार्यप्रणाली, संगृहित वस्तुओं से संबंध वैज्ञानिक एवं विद्वतापूर्ण आँकड़ो, दैनन्दिन सन्दर्भ पत्र तथा वस्तुओं के हस्तांतरण या स्थानान्तरण का लेखा-जोखा एवं सभी प्रकार के अभिलेखागार जो अधिक स्थायी सन्दर्भ के उद्देश्य से रखे जाते है। यह तथ्य मानव-विज्ञान, पुरातत्त्व, इतिहास एवं कला आदि सभी विषयों के संग्रहालयों के लिए सही है। अत: कहा जा सकता है कि चित्रकला, मूर्तिकला, शिल्पकला, सिक्कों, पाण्डुलिपियों आदि में सांगीतिक आयाम और तत्संबंधी लुप्तप्राय हो रहे तथ्यों को दर्शाने का महती कार्य संग्रहालय सजीव रूप से करते हैं। निसंदेह, पारंपरिक भारतीय संगीत से संबंधित विभिन्न विषयों के सफल अध्ययन के लिए मात्र संग्रहालयों में संगृहित पूर्ण, अपूर्ण तथ्यों पर निर्भर नहीं किया जा सकता। किन्तु यह भी निर्विवाद है कि इनकी सहायता से तत्संबंधी विषयों में विद्यार्थियों के लिए अवसर, रुचि और उत्कंठा को, जिनके बिना अध्ययन अधूरा है, आसानी से जागृत किया जा सकता है। उत्कंठित मस्तिष्क लेकर अपने अध्ययन की दिशा में प्रेरित विधार्थी को एक विशेष लाभ होगा इस संबंध में उसके पास एक केन्द्र बिन्दु होगा जिसके इर्द-गिर्द उसके संगृहित आँकड़ों को व्यवस्थित किया जा सकता है। अत: निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि भारतीय संगीत के क्षेत्र में संग्रहालयों के महत्त्व को कदापि नकारा नहीं जा सकता, दूसरी सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि संग्रहालयों में संगृहित सांगीतिक सामग्री पर निरंतर अध्ययन समय की माँग भी है, क्योंकि नवीन तथ्यों के प्रकाश में आने से संग्रहालयों में इनकी संख्या समय के साथ-साथ समृद्ध होती जा रही है। अत: संगीत विषय की समृद्धि के लिए यह अति आवश्यक है।

मुख्य शब्द : संग्रहालय, संग्रहालयों की प्रवृत्ति, मानवविज्ञान, नवसंग्रहालय विज्ञान, संगीत संग्रहालय
शोध-पत्र

भारतीय संगीत की विशाल एवं विस्तृत परंपरा का दिग्दर्शन जहाँ एक ओर पुस्तकालयों में व्यापक रूप में प्राप्त होता है, वहीं दूसरी ओर उसके अनेक ज्ञात/अज्ञात पहलुओं पर आधारित यथासंभव सामग्री, जो निश्चित रूप से संबंधित विषयों से जुड़े नवीन तथ्यों को उजागर करने में सहायक सिद्ध हो सकती है, की उपलब्धता की दृष्टि से संग्रहालयों की भूमिका भी अपना विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

भारत जैसे विशाल देश में जहाँ भारतीय संगीत जैसी महान् कला की अभिव्यक्ति विभिन्न रूपों में सदियों के विकास को संजोती हुई दिखाई देती है, ऐसी असंख्य कलाकृतियाँ उपलब्ध होती हैं, जिनमें गीत, वाद्य एवं नृत्य परम्पराओं से संबंधित लाभकारी तथा रोचक सूचनाएँ प्राप्त हो सकती हैं। संभवत: संगीत ही एकमात्र ऐसी 'कला' है जिसकी कलात्मक अभिव्यक्ति संगीत के अतिरिक्त मूर्तियों, भित्तिशिल्प, चित्रों इत्यादि के माध्यम से हुई है और इन सभी स्त्रोतों का एक बड़ा भाग हमारे 'संग्रहालयों' में सुरक्षित है।

संग्रहालय

संग्रहालय शब्द का सूत्रपात संग्रह + आलय इन दो शब्दों के संयोग से हुआ है। संग्रहालय जगत में संग्रहालय की सर्वाधिक लोकप्रिय व प्रचलित परिभाषा, जो अन्तर्राष्ट्रीय संग्रहालय (आई. सी. ओ. एम.) परिषद् द्वारा सन् 1972 में दी गई के अनुसार—''संग्रहालय एक लाभ की इच्छा न रखने वाली संस्था है, जो समाज की सेवा तथा उसके विकास में रत है, यह जनता हेतु खुली है, जो कृतियों को एकत्र करती है, संरक्षित करती है, उन पर शोध करती है, जनता से वार्तालाप करती है, प्रदर्शन करती है,

जिसका उद्देश्य है ज्ञान, शिक्षा तथा मनोरंजन, इस हेतु यह मनुष्य तथा उसके वातावरण से (कृतियों अथवा प्रमाण) वस्तु सामग्रियों को एकत्र करती है।''[1]

'संग्रहालय' प्राचीन और अर्वाचीन विलक्षण कलाकृतियों और विलक्षणताओं का भंडार मात्र नहीं है, बल्कि यह उन विलक्षण वस्तुओं के ऐसे आलय हैं जिनमें मानव-विकास की समस्त सम्भावनाएँ निहित हैं। संग्रहालय द्वारा प्रदत्त ज्ञान एवं शिक्षा किताबी नहीं है वरन् हमारे चारों ओर विद्यमान प्रकृति एवं जीवन पर आधारित होती है, जिसमें मानव और प्रकृति के पारस्परिक सम्बन्ध का अध्ययन किया जाता है। कहना ना होगा कि संग्रहालय एक बहु-आयामी एवं जीवन-पर्यन्त शिक्षा का स्त्रोत हैं।

भारत में संग्रहालयों की प्रवृत्ति का संक्षिप्त परिचय

भारत में संग्रहालयों की प्रवृत्ति अंग्रेजों द्वारा अठ्ठारहवीं शताब्दी के अंत में शुरू की गई जो तब से वर्तमान तक निरन्तर प्रगति कर रही है। तथापि साहित्यिक साक्ष्यों एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि भारत में संग्रह तथा संग्रहालय की अवधारणा अत्यन्त प्राचीनकाल से ही उपस्थित थी। प्राचीन और मध्यकालीन भारतीय साहित्य में आलेख्य गृह, वीथि तथा चित्रशाला जैसे शब्दों का पर्याप्त प्रयोग हुआ है जो चित्र, मूर्तियों, मृणमूर्तियों व मृदभाण्डों को प्रदर्शित करने के लिए प्रयुक्त किए जाते थे, लेकिन इन शाही संग्रहों को देखने की अनुमति सामान्य वर्ग को नहीं थी। विविध संस्कृत नाटकों यथा—भारतकृत प्रतिमानाटकम् तथा श्री हर्षकृत नैषधीयचरितम् में पूर्वजों की मूर्तियाँ बनाने, उनकी पूजा करने[2] तथा राज-दरबार से जुड़ी स्थायी व सचल प्रदर्शन वीथिका की उपस्थिति[3] की बात ज्ञात होती है। यहाँ पटचित्रों के साथ ही दृश्य-श्रव्य प्रस्तुतिकरण की भी व्यवस्था थी, जो कि आधुनिक संग्रहालयों का भी महत्त्वपूर्ण अंग है।[4] अत: कहा जा सकता है कि यह आलेख्य गृह, चित्रशाला तथा विथियाँ एक प्रकार से परंपरागत संग्रहालयों का ही रूप थी, लेकिन एक सीमा तक, क्योंकि ये सभी के लिए नहीं थी केवल एक वर्ग विशेष के मनोरंजन तक ही सीमित थीं, सामान्य जन का इन से कोई सरोकार नहीं था।

सन् 1784 में सर विलियम जोंस ने कलकत्ता में 'रॉयल एशिआटिक सोसायटी ऑफ बंगाल' की स्थापना की जिसका उद्देश्य एशिया के इतिहास, कला, विज्ञान तथा संस्कृति के क्षेत्र में शोध-अनुसंधान करना था। सन् 1784 और 1796 के बीच में विद्वानों द्वारा पुरातत्त्व, प्राणीशास्त्र, भूविज्ञान, नृतत्त्व, मानव-विज्ञान आदि से सम्बन्धित अनेको वस्तुओं को संग्रहित किया। जिनके संग्रहण के लिए 1796 में 'एशिआटिक सोसायटी ऑफ बंगाल' ने अपने संग्रहालय की स्थापना की। परन्तु ठोस रूप में Nathaniel Wallich द्वारा 1814 में वर्तमान 'इंडियन म्युज़ियम' कलकत्ता अस्तित्व में आया। सन् 1796-1857 में अंग्रेजों द्वारा भारत में 15 संग्रहालयों की स्थापना हुई। इसका प्रभाव उन राज्यों पर भी पड़ा जो देशी राजाओं के अधीन थे। परिणामस्वरूप देशी राजाओं द्वारा ग्यारह संग्रहालय 1858-1898 में अस्तित्व में आए। इन महाराजाओं के पास उनके महलों में सिलहखाना, तोशखाना, किताबखाना तथा महलों का साज़सामान अपने आप में एक छोटे संग्रहलाय थे। 1862 में आर्क्योलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया की स्थापना के बाद 1874 में मथुरा में सर्वप्रथम तटस्थलीय संग्रहालय (साइट म्यूजियम) की प्रवृत्ति अस्तित्व में आई। सम्प्रति भारत में 30 से अधिक तटस्थलीय संग्रहालय हैं। 1878 में भारत में 'इंडियन ट्रेज़र ट्रोव एकट' के अस्तित्व में आने से सरकार को पुरातत्त्वीय तथा नृतत्त्व संबंधी वस्तुएँ तथा सिक्के इत्यादि प्राप्त होते हैं, जिसके कारण संग्रहालयों के संग्रह समृद्ध होते हैं। 1899-1927 में तत्कालीन वाइसराय और गर्वनर जनरल Lord Nathaniel Curson ने भारतीय पुरातत्त्व विद्या की वृद्धि के लिए प्राचीन स्थलों की खोज तथा उत्खन्न, अभिलेख विद्या, शोध, प्रकाशन और प्राचीन स्मारकों का संरक्षण तथा संग्रहालयों की स्थापना आदि कई बातों को समाविष्ट किया। जिससे संग्रहालय की उपयोगिता एवं महत्त्व तथा स्मारकों के सरंक्षण के महत्त्व को बल प्राप्त हुआ। जोन मार्सल के सहयोग से इस समयकाल में अनेक संग्रहालय पुरातत्त्वीय महत्त्व के स्थानों पर खुले जैसे—सारनाथ 1904, लालकिला 1909, खजुराहो 1910, नालन्दा 1915, सांची 1919, मोहनजोदड़ो 1924-25, हड़प्पा 1926-27, एवं तक्षशिला 1928।[5]

सरकारी प्रयत्नों के अतिरिक्त शैक्षणिक संस्थाओं, सुशिक्षित व्यक्तियों हेतु स्थापित संस्थाओं, नगर सम्बद्ध संस्थाओं तथा भारतीय नागरिकों ने भी संग्रहालयों की वृद्धि में अपना योगदान दिया। विभिन्न शैक्षणिक संस्थाओं द्वारा 19 संग्रहालय स्थापित किए गए। 1930 की वैश्विक आर्थिक मंदी तथा सन् 1939 के द्वितीय विश्व युद्ध के कारण संग्रहालयों के विकास में गतिरोध पाया जाता है। इन विपरित परिस्थितयों के बावजूद लगभग चार दर्जन नए संग्रहालय 1928-1947 तक स्थापित हुए। संग्रहालय प्रवृत्ति के विकास में भारतीय विश्वविद्यालयों ने भी योगदान दिया और किसी व्यक्ति विशेष की स्मृति से सम्बद्ध संग्रहालयों का एक नया दौर शुरू हुआ।[6]

सन् 1945 में पुरातत्त्वेवत्ता Sir Mortimer Wheeler ने यह प्रस्ताव दिया कि देश में एक नेशनल म्यूज़ियम को स्थापित किया जाए। भारत सरकार ने इस दिशा में कुछ कदम उठाये और एक समिति का गठन किया। सन् 1949 में अन्ततोगत्वा स्वातन्त्रोत्तर काल में अगस्त माह में नई दिल्ली में 'राष्ट्रीय संग्रहालय' अस्तित्व में आया। आज भारत में लगभग 600 संग्रहालय हैं, जिनका संचालन केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, नगर पालिकाओं, विश्वविद्यालयों, स्वतंत्र समितियों, ट्रस्टों इत्यादि द्वारा हो रहा है।[7] जिनमें बहुउद्देश्यीय, प्रकृति विज्ञान, पुरातात्त्विक, ऐतिहासिक, कला, शिल्प, लोक कला, वैयक्तिक, विशिष्ट, महाराजा, बाल, विज्ञान, एवं विविध संग्रहालय संगीत सम्बन्धी सामग्री के लिए भी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं।

संग्रहालयों में संगीत एवं सांस्कृतिक मानव-विज्ञान

संगीत से संबंधित सामग्री हमें किन संग्रहालयों से मिलती है और वह किस

प्रकार हमारे लिए बहुउपयोगी सिद्ध होती है, यह जानने से पहले यह जानना आवश्यक है कि संग्रहालयों में संगीत की स्थिति क्या है अथवा संग्रहालय अनुशीलन में वह बीज रूप में किसके अन्तर्गत आता है।

मानव विज्ञान एक व्यापक शब्द है और इसके विषय क्षेत्र को संसार के विभिन्न भागों में थोड़े हेर-फेर से एक जैसा माना जाता है। इसके मुख्य पक्ष दो है—प्राकृतिक मानव-विज्ञान तथा सांस्कृतिक मानव विज्ञान। मानव विज्ञान में मानव जाति विज्ञान तथा बहुविधि भौतिक संस्कृति शामिल है और संग्रहालय में अधिक इसी का प्रदर्शन होता है।

सांस्कृतिक मानव विज्ञान में मानव की कृतियों और संस्कृतियों का निरूपण होता है। सांस्कृतिक जैविक उत्तराधिकार का परिणाम नहीं वरन् समाज के एक सदस्य की हैसियत से मानव द्वारा अर्जित तथा संचार एवं ज्ञानार्जन द्वारा सम्प्रेषित व संधारित समाकलित विज्ञआचरण पैटर्नों का योग है। प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक मानव विज्ञान की विभिन्न शाखाओं को, वैज्ञानिक एवं ऐतिहासिक पूर्वाभिमुखीकरण दोनों ही दृष्टियों से, हायबेल ने निम्न ढंग से व्यक्त किया है[8]—

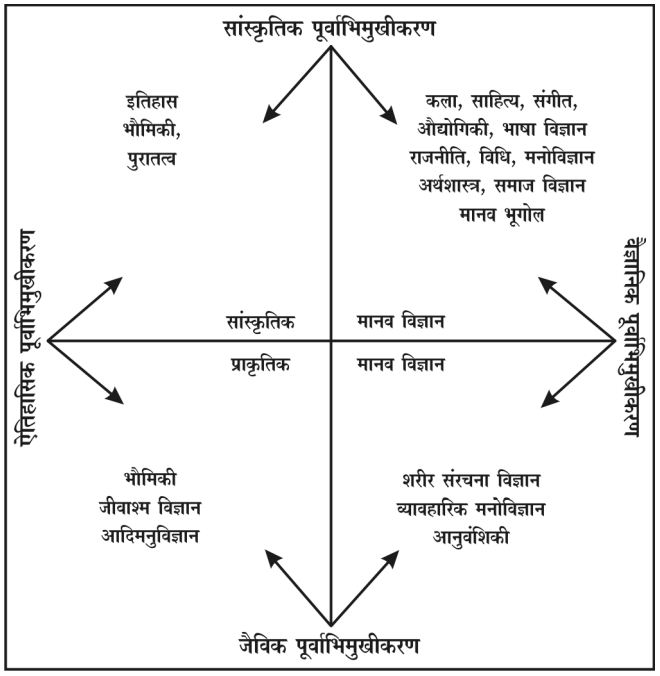

इससे स्पष्ट है कि मानव-विज्ञान में मानव के अध्ययन के माध्यम से भौतिकी, जैविकी, समाज-विज्ञान, मानविकी, संस्कृति और इतिहास का अत्यन्त सार्थक समन्वय स्थापित किया जाता है। यही कारण है कि सामान्य ज्ञान की प्राप्ति तथा मानव द्वारा मानव को समझने में यह एक अत्यन्त रुचिकर और उपयोगी ज्ञान-शाखा है। जिसे संगीत विषय पर लागू करके उससे सम्बन्धित ज्ञान अर्जित किया जा सकता है।

संग्रहालयों में संरक्षित संगीत सम्पदा

संगीत संग्रहालयों की बात करते हुए हमें अपने दृष्टिकोण को मात्र केन्द्रीय संगीत नाटक, नयी दिल्ली की वाद्य वीथिका या राष्ट्रीय संग्रहालय, नई दिल्ली की शरणरानी वाद्ययंत्र वीथिका इत्यादि तक ही सीमित नहीं रखना चाहिए। वरन् मानव उत्थान और उसके विकास के विभिन्न चरणों में व्याप्त सांगीतिक तथ्यों को जानने की दृष्टि से मानव-विज्ञान से संबंधित लगभग समस्त संग्रहालयों का अनुशीलन करना चाहिए।

संग्रहालय का उपयोग मानव-ज्ञान के उन सभी विषयों के लिए हो सकता है जो मूर्त वस्तुओं द्वारा प्रदर्शित किए जा सकते हैं। भारतीय संगीत के क्षेत्र में प्राचीन भारतीय चित्रकला, मूर्तिकला, वास्तुकला, सिक्के व मुद्राओं, शिलालेख/अभिलेख/तामपत्र की प्रमुख रूप से अध्ययन के लिए उपादेयता सर्वाधिक है, ये तथ्य संकलन के अच्छे स्रोत हैं।

भारतीय संगीत के ऐतिहासिक सन्दर्भ में प्रागैतिहासिक युग जिसका कोई लिखित प्रमाण हमारे पास उपलब्ध नहीं है तथा विश्व की प्राचीनतम सभ्यताओं में गणमान्य सिंधु घाटी की सभ्यता जिसकी लिपि का अभी तक उद्घाचन नहीं हो पाया इन दोनों समय की सांगीतिक सामग्री को जानने के लिए इनका प्रत्यक्ष दर्शन ही एक मात्र साधन है, जिसका दायित्व संग्रहालय वर्तमान में काफी हद तक बखूबी निभा रहें हैं।

इसके बाद के समय काल को दर्शाने वाली संग्रहालयों में संगृहित सांगीतिक सामग्री को यहाँ संक्षेप में समझना आवश्यक है। सर्वप्रथम चित्रकला की बात करेंगे—

चित्रकला

चित्रकला और संगीत कला में प्रभूत तात्त्विक साम्य है। प्रागैतिहासिक युगीन गुफा चित्रों और सैन्धव सभ्यता युगीन ताम्र तथा मृद्भाण्डों पर की गई चित्रकारी के बाद जोगीमारा, अजन्ता, बाद्य, बादामी, सित्तनवासल, चोला काल, दक्षिण चित्रकला में संगीत की दृष्टि से काफी विकास हुआ। तत्पश्चात् राजस्थानी, मुगल और पहाड़ी चित्रकला में राग-रागिनीयों का चित्रण मिलता है। इसके बाद रागमाला चित्रकारी का उदय हुआ। इसके बाद प्रत्येक भारतीय शैली में राग का स्वरूप विकसित हो चुका था और उसी कल्पना के आधार पर प्रत्येक राग को मूर्त रूप देने की चेष्टा की गई।[9] इन सभी साक्ष्यों को संग्रहालयों में वास्तविक रूप में देखा जा सकता है। पुस्तक में छपे चित्र स्थानाभाव के कारण पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाते लेकिन संग्रहालयों के सहयोग से हम इन्हें इनके वास्तविक आकार-प्रकार, रूप-रंग में देख कर उनका सही मूल्यांकन कर सकते हैं।

मूर्तिकला

मूर्तिकला में संगीत का उद्भव समाज की स्वाभाविक कलाभिव्यक्ति को मूर्त रूप देने के उद्देश्य से हुआ था।[10] भारत में दूसरी शती ई.पू. से लेकर उसके बाद के समस्त कालों तक शिल्पकला का अनन्त भण्डार प्राप्त होता है। जिसके आधार पर तत्कालिक संगीत और उसके विकास पर एक विशेष प्रकार की दृष्टि डाली जा सकती है।

लाल मणि मिश्र जी के अनुसार—''मूर्तिकला में संगीत के उदाहरण हमें सिंधु सभ्यता के क्षेत्र से प्राप्त वीणा की मूर्ति''[11] आदि के रूप में

देखने को मिलते हैं। तदोपरान्त मूर्तिकला में सांगीतिक साक्ष्य मौर्यकाल, शुंगकाल, कुषाण, सातवाहन काल, गुप्तकाल, पूर्व मध्यकाल, उत्तर मध्यकाल इत्यादि सभी में प्राप्त होते हैं।

संग्रहालयों में पुरातात्त्विक साक्ष्यों में मूर्तिकला एक ऐसा सशक्त प्रमाणिक स्त्रोत है जिसे शब्दों के घेरे में समाविष्ट करना अत्यंत कठिन कार्य है। ऐसा इसलिए कहा गया है क्योंकि मूर्तिकला में संगीत के अन्तर्गत नृत्य-वाद्य ही प्रथम प्रेरणा या उद्देश्य रूप में रहा है। जिससे सिंधु सभ्यता काल से लेकर प्रत्येक काल में मूर्तिकला स्वतंत्र रूप में और स्थापत्य के अंतर्गत भित्तिशिल्प के रूप में प्रचुर मात्रा में प्राप्त होती है।[12] जिनके संग्रहण के महत्ती कार्य के लिए हम सदैव सांगीतिक दृष्टि से विशेष रूप से संग्रहालयों के ऋणी रहेंगे। जहाँ इनके खण्डित/अखण्डित रूप या इनकी प्रतिकृतियाँ पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हैं।

वास्तुकला

वास्तुकला का क्षेत्र चित्रकला और मूर्तिकला से कहीं अधिक व्यापक है। चित्रकला और मूर्तिकला का बहुत बड़ा भाग भारत के प्राचीन कालीन स्मारकों की निर्माण गाथा में वास्तुकला का प्रमुख अंग है।

वास्तुकला के मर्मज्ञ विद्वान डॉ. कुमार स्वामी के शब्दों में—''भारत की सभी देन उसके दर्शन से अनुप्राणित हैं। जहाँ तक भारतीय कला की उद्भावना का संबंध है, उसमें कलाकार के मानसिक योग एवं प्रारंभिक धार्मिक संस्कारों का होना अनिवार्य है।'' अत: भारत में जहाँ भी वास्तुकला का दर्शन होता है वहाँ धर्म का आवरण ओढ़े हुए विविध सांगीतिक साक्ष्यों का प्रदर्शन संगीत के प्रमुख विषय के तौर पर उभरकर सामने आता है। जिनका अतीव दर्शन भरहुत, सांची, अमरावती, नागार्जुनकोंडा, सारनाथ, खजुराहो, कोणार्क, बहद्देश्वर, एलीफेंटा, बेलूर, तंजावूर इत्यादि सभी में प्राप्त होता है। अत: वास्तुकला के अंतर्गत स्थूलत: स्तूपों, मंदिरों और गुहावास्तु के प्रकारों को अंलकृत करने वाले शिल्प द्वारा संगीत के विकास को समझने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। इन्हें इनके तटस्थलीय संग्रहालयों में तथा इनके खण्डित/अखण्डित एवं प्रतिकृतियों को व्यापक रूप में अन्य संग्रहालयों में भी देखा जा सकता है।

शिलालेख/पुरालेख/अभिलेख-सिक्के/मुहरें/मुद्राएँ-पाण्डुलिपि

उपरोक्त तीनों संग्रहित सामग्रियों से भी हम संगीत की अद्भुत जानकारी प्राप्त कर सकते हैं जिनमें सबसे दुर्लभ साधन हैं शिलालेख/अभिलेख/पुरालेख तत्पश्चात् सिक्के/मुहरें/मुद्राएँ तथा फिर पाण्डुलिपि। अन्य साधनों से अधिक प्रमाणिक ये स्त्रोत माने जाते हैं क्योंकि इनमें अधिकतर जानकारी सीधे-तौर पर सूचना के रूप में प्राप्त होती है।

लोक-कला संग्रहालय

उपरोक्त वर्णित स्त्रोतों के अतिरिक्त संगीत की दृष्टि से लोक-कला से संबंधित संग्रहालयों का भी विशेष महत्त्व है। लोक कला का मूल स्त्रोत है प्रकृति और कुछ अलौकिक शक्तियाँ जो मानव-जीवन में स्वत: जन्म लेती और पनपती हैं इनका घर है गाँव, जिनमें हमारे पुरखों ने जीवन बिताया और फूले-फले उन्होंने अपने जीवन-क्रम को क्रमबद्ध रखने के लिए देवता की कल्पना की।[13] साथ ही विभिन्न त्यौहारों से संबंधित क्रियाओं की पूर्ति के लिए कलापूर्ण सृजन, अपनी सृजन-क्षमता के अनुरूप, समय-समय पर लोक मानस द्वारा किए गए जो लोक-कला के रूप में परिभाषित हुई, जिसमें संगीत लगभग समस्त क्रिया-कलापों में लोक-गीत, लोक नृत्य एवं लोक वाद्य के विभिन्न रूपों में सदैव विद्यमान रहा है।

अत: बहु संस्कृति प्रपंच के क्षेत्र में विभिन्न मानवजातियों से संबंध वस्तुएँ लोक कला के रूप में मानव जाति शास्त्र में संग्रहालयों में होती हैं। ऐसे संग्रहालयों में संगीत से जुड़े रोचक तथ्यों का अध्ययन किया जा सकता है जिससे आदिम लोगों के सौंदर्यबोध तथा कला-कौशल का पता चल सकता है।

वैसे देखा जाए तो लोक-कला की जड़ें हमारे देश की सांस्कृतिक गतिविधियों के रूप में इतनी गहराई तक धँसी है कि उनका थहा लगा पाना असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। इतिहास की सैकड़ों, हजारों परतों से भी बहुत नीचे धँसी, आध्यात्मिकता के रहस्यपूर्ण घेरे में इन भारतीय कलाओं का उद्गम हम पाते हैं।[14] आवश्यकता इस बात की है कि भारतीय जन-मानस में हजारों वर्ष से प्रचलित लोक-संगीत के इन माध्यमों को विलुप्त होने से बचाया जाए एवं अनुसांधान की दृष्टि से वर्तमान में इन्हें उपयोगी बनाने का प्रयास किया जाए। इस दिशा में लोक-कला संग्रहालयों का प्रयास सराहनीय व प्रेरणापद है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि उपरोक्त वर्णित सभी स्त्रोतों का एक बड़ा भाग हमारे संग्रहालयों में सुरक्षित है, जहाँ से हम इनकी जानकारी प्राप्त कर सकते है। ''संग्रहालयों में संगीत के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराने वाले माध्यम पुरातात्त्विक दृष्टि से व्यापक हैं, जिनके द्वारा महत्त्वपूर्ण ज्ञान अर्जित किया जा सकता है। इनमें से असंख्य ज्ञात तथ्यों का अभी स्पष्टीकरण होना बाकी है अर्थात् जिन पर पुरातत्त्वविदों द्वारा अनुसंधान किया जा रहा है, इसके अतिरिक्त वह सशक्त ज्ञान की शाखाएँ जो अभी अज्ञात हैं, जिन पर भविष्य में शोध होगा। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि पुरातात्त्विक सामग्री में संगीत से अवगत कराने वाले प्रमाण प्रचुर मात्रा में है या यूँ कहा जाए कि उनकी संख्या अनगिनत हो सकती है।''[15]

ऐसी समस्त प्रकार की संगीत से संबंधित सामग्री को हम वास्तविक रूप में संग्रहालयों में उसके संक्षिप्त परिचय एवं विस्तृत जिज्ञासा के साथ ग्रहण कर सकते हैं। क्योंकि प्रत्येक शोधार्थी अपने-अपने स्तर पर सीधे तो इन स्थानों और वस्तुओं को प्रत्यक्ष देखने नहीं जा सकता, अत: वह संग्रहालयों से उन भागों को देख ही सकता है जितना की संग्रहालयों से प्राप्त है, जिसका क्षेत्र वास्तव में बहुत व्यापक है। चित्रकला, मूर्तिकला, शिल्पकला, लोक-कला इत्यादि में सांगीतिक आयाम और लुप्तप्राय हो रही सांगीतिक कलाओं को दर्शाने का महती कार्य संग्रहालय सजीव रूप से करते हैं।

नवसंग्रहालय विज्ञान की उपयोगिता

संग्रहालय मात्र अपने क्षेत्र विशेष के दायरे तक ही सीमित नहीं हैं अपितु इनका कार्य क्षेत्र काफी व्यापक है परंपरागत संग्रहालयों में आने वाले दर्शकों की भूमिका दर्शकों वाली थी। उनके लिए ना तो मनोरंजक, रोचक व ज्ञानवर्धक कार्यक्रम तैयार किए जाते थे, न ही इस प्रकार के कार्यक्रमों में उनकी किसी भी प्रकार की सहभागिता होती थी। परम्परागत संग्रहालय विरासतों के मूर्त पक्ष (मूर्तियाँ, चित्रकला, भग्नावशेष इत्यादि) को संरक्षित करने का कार्य तो एक सीमा तक कर भी रहे थे, किन्तु विरासतों के अमूर्त पक्ष (लोक विचारों, धारणाओं, कर्मकाण्डों, परम्पराओं) की सुरक्षा करने में अक्षम सिद्ध हो रहे थे। तब संग्रहालयविदों ने संग्रहालयविज्ञान के क्षेत्र में परिवर्तन की आवश्यकता महसूस की, ताकि न केवल विलुप्त होती कलाकृतियों, वरन् विलुप्त हो रही सांस्कृतिक विरासतों व लोक-परम्पराओं को भी संरक्षित व सुरक्षित किया जा सके।[16]

भारतीय संगीत के बहुपक्षीय एवं बहुआयामी विकास की दृष्टि से भी उपरोक्त विचारधारा अपना महत्त्व सिद्ध करती है। संग्रहालयों में समय-समय पर होने वाले कार्यक्रमों, सम्मेलनों, प्रदर्शनियों, कार्यशालाओं, विचार-गोष्ठीयों इत्यादि के माध्यम से संगीत संबंधी नवीन जानकारी प्राप्त की जा सकती है और वर्तमान में इनकी उपयोगिता का मूल्यांकन तुलनात्मक दृष्टि से संगीत के विभिन्न पहलुओं के सन्दर्भ में किया जा सकता है एवं उसकी प्रासंगिकता को सिद्ध किया जा सकता है।

निसंदेह, सफल अध्ययन का क्षेत्र मात्र शिल्प तथ्यों की मदद से पूर्ण नहीं होता, विशेषत: भारतीय संगीत की पारंपरिक शास्त्रीय दृष्टि से। फिर भी इसके महत्त्व को उपेक्षित नहीं किया जा सकता, क्योंकि यह निविर्वाद है कि उनकी मदद से अवसर, रुचि और उत्कंठा को, जिनके बिना अध्ययन व्यर्थ है, आसानी से जागृत किया जा सकता है। उत्कंठित मस्तिष्क लेकर अपने अध्ययन की दिशा में प्रेरित विद्यार्थी को एक विशेष लाभ होता है। जिसके इर्द-गिर्द उसके संग्रहित आँकड़ों को व्यवस्थित किया जा सकता है वर्तमान में यह संग्रहालयों में संग्रहित सम्पदा भारतीय संगीत के इतिहास की दृष्टि से एक अमूल्य धरोहर के रूप में उभरकर सामने आई है। भारतीय संगीत के इतिहास का एक बड़ा भाग इसी पुरा-सम्पदा पर ही आधारित है, इसलिए शास्त्रों में वर्णित या लिखित इतिहास में वर्णित संगीत के विधिवत क्रमानुसार विवरण के तुलनात्मक अध्ययन में पूरी तरह से खरा न उतरने पर भी संग्रहालय में संग्रहित पुरातात्त्विक आधारित इतिहास को नकारा नहीं जा सकता।

उपरोक्त वर्णित परिचर्चा के उपरान्त भारतीय संगीत के सन्दर्भ में संग्रहालयों की भूमिका का महत्त्व स्वत: सिद्ध हो जाता है। संगीत कला की कलात्मक अभिव्यक्ति संगीत के अतिरिक्त मूर्तियों, भितिशिल्प, चित्रकला इत्यादि के माध्यम से होना संगीत के सर्वांगीण विकास का पक्षधर है। जिसका संग्रहण कर उसे जन सुलभ बना कर संगीत के विद्यार्थियों को उसके महत्त्व के प्रति जागरूक एवं सचेत करने का महत्त्वपूर्ण कार्य संग्रहालयों के द्वारा ही संभव हो पाया है। प्रस्तुत शोध-पत्र में यह स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है कि संग्रहालयों में संगीत की खोज केवल संगीत संग्रहालयों में ना करके अन्य तत्संबंधी संग्रहालयों में भी करने की आवश्यकता है। इसी क्रम में यदि विचार किया जाए विद्यालयों/विशेषत: महाविद्यालयों में संगीत संग्रहालयों पर तो यह बात दुरूह हो सकती है, परन्तु असंभव नहीं।

विश्वविद्यालयों के संगीत विभाग में जिस प्रकार सांगीतिक पुस्तकों और रागों, बंदिशों के ऑडियो/विडियो रिकार्डस विद्यार्थियों की सुविधा एवं रुचि के लिए उपलब्ध कराए जाते हैं। ठीक उसी प्रकार छोटे स्तर के ही सही किन्तु संगीत संग्रहालय होने चाहिए। जिसमें संग्रहालयों में संग्रहित सांगीतिक सामग्री की यथा संभव जानकारी प्राप्त हो सके। संग्रहालयों में उपलब्ध सामग्री की प्रतिकृतियों को इन संगीत संग्रहालयों में स्थापित किया जा सकता है तथा अन्य सामग्री की जानकारी दी जा सकती है। संगीत की प्राचीन दुर्लभ पाण्डुलिपियों अथवा ऐसे ग्रन्थों की माइक्रो फिल्म इत्यादि की सुविधा भी उपलब्ध कराना अति महत्त्वपूर्ण होगा। इसके अतिरिक्त शास्त्रीय तथा लोक संगीत में प्रयुक्त होने वाले प्राचीन और अर्वाचीन वाद्य प्रकारों का भी कक्ष होना लाभकारी होगा। साथ ही श्रेष्ठ संगीतज्ञों/कलाकारों की छायाचित्रों की गैलरी तथा विभिन्न घरानों की वंशावली की तालिका चित्र सहित यदि इन संगीत संग्रहालयों में उपलब्ध कराई जाए तो यह कक्ष संगीत के अध्येताओं के लिए एवं विद्यार्थियों के लिए बड़ा महत्त्वपूर्ण एवं सहायक सिद्ध हो सकता है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह होगा कि दर्शकों एवं छात्र-छात्राओं में प्रारम्भ से ही संगीत के इस पक्ष में रुचि तथा अध्ययन के प्रति प्रेरित करने में अहम भूमिका अदा कर सकते हैं।

अन्त में प्रस्तुत विषय की व्यापकता को केन्द्रित करते हुए भारतीय संगीत के सन्दर्भ में संग्रहालयों की भूमिका में यह तथ्य अति आवश्यक है कि संग्रहालयों में संरक्षित एवं संग्रहित संगीत सम्पदा पर संगीत जगत को अवश्य जागरूक होना चाहिए। भारतीय संगीत के इतिहास का बड़ा भाग पुरातत्त्व पर आधारित है जो यथा संभव संग्रहालयों में प्राप्त होता है। भावी अनुसंधानों के सन्दर्भ में यह विषय और भी गंभीर हो जाता है क्योंकि यह कोई नहीं जानता कि आने वाले समय में पुरातत्त्वविद धरती के सीने से क्या नवीन जानकारी को खोज निकालें और हमें इतिहास के पुन लेखन के लिए विवश कर दें। जैसा कि वर्तमान में वर्ष 2019 में पुरातत्त्वविद् प्रो. वसंत शिंदे द्वारा हरियाणा के राखीगढ़ी खोज के परिणाम, कि आर्य भारत के मूल निवासी थे, ने विश्व इतिहास को बदल दिया। प्रो. शिंदे ने कहा कि ''वह भारत सरकार से अनुरोध करेंगे कि इतिहास की पुस्तकों में इन नए तथ्यों को शामिल किया जाए।'' इसी प्रकार वर्ष 2018 में सिनोली, बागपत की खोज में मिले अवशेषों को वैदिक संस्कृति से जोड़ने का दावा किया गया। इन तमाम खोजों के साक्ष्यों को भविष्य में संग्रहालयों में स्थापित कर दिया जाता है और इससे पहले इन्हें

तटस्थलीय संग्रहालयों में भी प्रदर्शन के लिए रखा जाता है। इन खोजों में प्राप्त अवशेष किसी न किसी संस्कृति की ओर इशारा कर रहे होते हैं। आवश्यकता है हमें अपने विषय को उसमें खोजने की तभी हम उससे अन्य कड़ियों को जोड़ कर कुछ निश्चित परिणाम निकाल पाएँगे।

अत: संग्रहालयों के सन्दर्भ में लगभग प्रत्येक दृष्टि से चाहे वह प्रमुख रूप से पुरातात्त्विक हो या वाद्य विथिका के रूप में हो या दुर्लभ पाण्डुलिपियों इत्यादि के रूप में, प्रत्येक दृष्टि से भारतीय संगीत के इतिहास एवं संगीत के विभिन्न पहलुओं पर नवीन प्रकाश डाला जा सकता है। अपने विषय के उत्थान के लिए यह आवश्यक भी है जिससे संगीत विषय भी निरंतर प्राप्त होने वाली संग्रहालीयन सामग्री के सन्दर्भ में समय के साथ-साथ चल सके और नवीन तथ्यों को स्वयं में समाहित करता हुआ अपने मार्ग पर अग्रसर रहे।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. आई.सी.ओ.एम. उद्धृत तिवारी, उषा रानी, पाण्डेय, कु. आरती, दृष्टव्य : नव संग्रहालय विज्ञान : एक परिचय, प्रकाशक कला प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण 2011, पृ. 16
2. शुक्ल, गिरिशचन्द्र, पाण्डेय, विमलेश, संग्रहालय विज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2002, पृ. 13
3. वही, पृ. 17
4. भटनागर, अनुपमा, म्यूज़ियम, म्यूज़िओलॉजी एंड न्यू म्यूजिओलॉजी, संदीप प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1999
5. जैन, संजय, म्यूज़ियम एवं म्यूज़ियोलोजी - एक परिचय, प्रकाशक कनिका प्रकाशन, बड़ौदा, प्रथम संस्करण 2001, पृ. 63-81
6. वही, पृ. 81-84
7. वही, पृ. 85, 87, 95
8. अग्रवाल, ओ.पी., राय, सचिन, उद्धृत संग्रहालय अनुशीलन, (अनुवादक रमेश वर्मा) प्रकाशक एम. के. पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 1965
9. प्रताप, रीता, उद्धृत भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, प्रकाशक राजस्थानी हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, बारहवां संस्करण 2012
10. भगत, अंजुबाला, उद्धृत मूर्तिकला में संगीत का स्थान, प्रकाशक अंकित पब्लिकेशन्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2010
11. मिश्र, लालमणि, भारतीय संगीत वाद्य, प्रकाशक भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, द्वितीय संस्करण 2002, चित्र सूची, पृ. 1
12. शंकर, चित्रा, सांगीतिक वाद्यों का उद्‌गम तथा विकास, सांगीतिक पुरातात्त्विक दृष्टि, जर्नल, नाद-नर्तन जर्नल ऑफ डान्स एण्ड म्यूज़िक, वाल्यूम-6, जनवरी 2018, पृ. 79
13. कपूर, कंचन प्रेम, लोक नृत्य, सम्मेलन पत्रिका, लोक संस्कृति विशेषांक 1974, पृ. 372
14. प्रदर्शिका, पर्यटन विभाग, भारत सरकार 1972, पृ. 19
15. शंकर, चित्रा, Opcit पृ. 81
16. तिवारी, उषा रानी, पाण्डेय, कु. आरती, दृष्टव्य : नव संग्रहालय विज्ञान : एक परिचय, प्रकाशक कला प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण 2011